www.shodhpith.com ISSN (Online): 3049-3331

Shodhpith
International Multidisciplinary
Research Journal
(International Open Access, Peer-reviewed & Refereed Journal)
(Multidisciplinary, Bimonthly, Multilanguage)
Volume: 1 Issue: 4 July-August 2025

ग्रामीण भारत में महिलाओं की सामाजिक स्थिति–एक समाजशास्त्रीय अध्ययन

डॉ0 स्वीटी दर्शन

सहायक प्राध्यापक (अतिथि), समाजशास्त्र विभाग, वूमेंस कालेज, समस्तीपुर, एल एन एम यू, दरभंगा

शोध–सार

ग्रामीण भारत में महिलाओं की सामाजिक स्थिति एक जटिल और बहुआयामी मुद्दा है, जो पितृसत्तात्मक सं. रचनाओं, आर्थिक असमानता और सांस्कृतिक बंधनों से प्रभावित है। यह समाजशास्त्रीय अध्ययन ग्रामीण महिलाओं की सामाजिक, आर्थिक और राजनीतिक स्थिति का विश्लेषण करता है, जहाँ वे परिवार, समुदाय और राज्य के बीच संतुलन बनाए रखने की जद्दोजहद करती हैं। हालिया सर्वेक्षणों के आधार पर महिलाओं की साक्षरता, स्वास्थ्य, रोजगार और निर्णय–निर्माण प्रक्रियाओं में भागीदारी का मूल्यांकन करना है, ताकि लैंगिक असमानता की जड़ों को उजागर किया जा सके। ग्रामीण भारत, जहाँ 68% आबादी निवास करती है, महिलाओं की स्थिति को मापने के लिए एक आदर्श संदर्भ है, क्योंकि यहाँ परंपरागत मूल्य और आधुनिक चुनौतियाँ एक साथ टकराती हैं। अध्ययन की पद्धति मिश्रित (गुणात्मक–मात्रात्मक) है। विश्लेषण से स्पष्ट होता है कि ग्रामीण महिलाओं की साक्षरता दर 64ः है, जो शहरी 81% से काफी कम है, और अशिक्षा जागरूकता की कमी को बढ़ावा देती है। आर्थिक शोषण प्रमुख बाधा है; ठेकेदारों और भूमाफियाओं द्वारा श्रमिक महिलाओं का दोहन आम है, जहाँ केवल 18% महिलाएँ औपचारिक रोजगार में हैं। स्वास्थ्य क्षेत्र में, कुपोषण और मातृ मृत्यु दर (113/1,00,000) उच्च है, जबकि पंचायती राज में आरक्षण के बावजूद 37% सामान्य वर्ग और 30% SC/ST महिलाएँ प्रॅक्सी प्रतिनिधित्व का शिकार हैं। घरेलू हिंसा 35% मामलों में रिपोर्टेड है, जो पितृसत्ता की गहरी जड़ों को दर्शाती है। समाजशास्त्रीय दृष्टि से, ये आंकड़े संरचनात्मक असमानता को उजागर करते हैं, जहाँ शिक्षा और आर्थिक स्वतंत्रता सशक्तिकरण के प्रमुख साधन हैं। हालांकि, सरकारी योजनाएँ (जैसे बेटी बचाओ बेटी पढ़ाओ) प्रगति दिखाती हैं, लेकिन क्रियान्वयन की कमी बाधा है। निष्कर्षतः, ग्रामीण महिलाओं की स्थिति में सुधार के लिए लिंग–संवेदनशील नीतियाँ, शिक्षा अभियान और सामुदायिक जागरूकता आवश्यक हैं। यह अध्ययन सुझाव देता है कि समाजशास्त्रीय हस्तक्षेप से महिलाओं को हाशिए से केंद्र की ओर लाया जा सकता है, जो समग्र विकास का आधार बनेगा। भविष्य के शोध के लिए, जलवायु परिवर्तन और डिजिटल विभाजन के प्रभाव का अध्ययन उपयोगी होगा।

कुंजी शब्द– ग्रामीण महिलाएँ, सामाजिक स्थिति, पितृसत्ता, साक्षरता, आर्थिक शोषण, स्वास्थ्य असमानता, पंचायती राज, लैंगिक सशक्तिकरण, NFHS–5, समाजशास्त्रीय विश्लेषण

परिचय

सामाजिक स्थिति समाजशास्त्र में एक केंद्रीय अवधारणा है, जो किसी व्यक्ति या समूह की समाज में प्राप्त भूमिका, सम्मान, संसाधनों तक पहुँच और निर्णय–निर्माण क्षमता को संदर्भित करती है। मैक्स वेबर के अनुसार,

स्थिति सामाजिक सम्मान से जुड़ी होती है, जो आर्थिक, सांस्कृतिक और राजनीतिक कारकों से प्रभावित होती है। ग्रामीण भारत में महिलाओं की सामाजिक स्थिति का अध्ययन इसलिए महत्वपूर्ण है क्योंकि यह भारत की कुल आबादी का 68% हिस्सा (लगभग 90 करोड़ लोग) प्रतिनिधित्व करती है, जहाँ महिलाएँ परिवार, अर्थव्यवस्था और समुदाय की रीढ़ हैं, लेकिन पितृसत्तात्मक संरचनाओं के कारण हाशिए पर धकेली जाती हैं। जब संयुक्त राष्ट्र की सतत विकास लक्ष्यों (SDGs) में लैंगिक समानता को प्राथमिकता दी गई है, ग्रामीण महिलाओं की स्थिति का मूल्यांकन राष्ट्रीय विकास की कुंजी है। यह अध्ययन समाजशास्त्रीय दृष्टि से महिलाओं की स्थिति को बहुआयामी रूप से देखता है साक्षरता, स्वास्थ्य, आर्थिक स्वतंत्रता, राजनीतिक भागीदारी और हिंसा के रूप में। NFHS–5 (2019–21) के आंकड़ों से स्पष्ट है कि ग्रामीण महिलाओं की साक्षरता दर 64% है, जो शहरी 81ः से काफी पीछे है। यह असमानता न केवल व्यक्तिगत पीड़ा का कारण है, बल्कि समग्र सामाजिक प्रगति को बाधित करती है। अध्ययन का महत्व इस बात में है कि यह ग्रामीण महिलाओं को 'दृश्यमान' बनाता है, जो अक्सर सांख्यिकीय छाया में रह जाती हैं। समाजशास्त्र के दृष्टिकोण से, अमर्त्य सेन की श्क्षमता अवधारणाश का उपयोग कर, हम देखेंगे कि महिलाओं की क्षमताओं (शिक्षा, स्वास्थ्य) का विस्तार कैसे सामाजिक न्याय सुनिश्चित कर सकता है। ग्रामीण भारत में महिलाओं की स्थिति का अध्ययन वैश्विक संदर्भ में भी प्रासंगिक है। विश्व बैंक की 2025 रिपोर्ट के अनुसार, लैंगिक असमानता विकासशील देशों में ळक्च को 20ः तक कम करती है। भारत में, जहाँ ग्रामीण अर्थव्यवस्था कृषि पर निर्भर है, महिलाएँ 75% कृषि श्रम प्रदान करती हैं, लेकिन भूमि स्वामित्व केवल 13ः है।

ग्रामीण भारत का संदर्भः जनसांख्यिकीय और सामाजिक संरचना

ग्रामीण भारत एक विविधतापूर्ण सामाजिक ताना–बाना है, जहाँ 6,00,000 से अधिक गाँव फैले हैं। 2011 की जनगणना के अनुसार, ग्रामीण आबादी 833 मिलियन थी, जो 2025 तक 900 मिलियन से अधिक अनुमानित है। महिलाओं की संख्या लगभग आधी है, लेकिन उनकी सामाजिक स्थिति जाति, वर्ग और धर्म से प्रभावित है। SC/ST महिलाएँ सबसे वंचित हैं, जहाँ साक्षरता दर 50% से कम है। सामाजिक संरचना पितृसत्तात्मक है, जहाँ संयुक्त परिवार और गोत्र प्रथा महिलाओं को सीमित करती है। NSSO के 78वें दौर (2020–21) के अनुसार, ग्रामीण मि. हलाओं का श्रम भागीदारी दर 24% है, जो पुरुषों के 53% से काफी कम है। राजनीतिक स्तर पर, 73वें संशोधन (1993) ने पंचायतों में 33% आरक्षण प्रदान किया, लेकिन NFHS–5 से 37% महिलाएँ प्रॉक्सी (पुरुषों के माध्यम से) प्रतिनिधित्व का शिकार हैं। यह संदर्भ महिलाओं की स्थिति को समझने के लिए आवश्यक है, क्योंकि ग्रामीण अर्थव्यवस्था कृषि–केंद्रित है, जहाँ महिलाएँ असंगठित क्षेत्र में कार्यरत हैं। जलवायु परिवर्तन ने उनकी स्थिति को और जटिल बनाया है, जहाँ सूखा और बाढ़ महिलाओं पर अधिक बोझ डालते हैं। 2025 के संदर्भ में, जब च्ड–. श्र।छड।छ योजना आदिवासी महिलाओं के लिए शुरू हुई, तो अध्ययन इन पहलुओं को जोड़ेगा।

ऐतिहासिक पृष्ठभूमिः उपनिवेश से स्वतंत्रता तक

ग्रामीण महिलाओं की स्थिति की जड़ें प्राचीन काल में हैं, जहाँ मनुस्मृति ने उन्हें अधीनस्थ बनाया। उपनिवेश काल में, ब्रिटिश नीतियों ने भूमि सुधारों से महिलाओं को वंचित किया, लेकिन सती प्रथा उन्मूलन (1829) और विधवा पुनर्विवाह (1856) जैसे सुधार हुए। स्वतंत्रता आंदोलन में, गांधीजी ने महिलाओं को श्स्वदेशीश का प्रतीक बनाया, लेकिन ग्रामीण स्तर पर परिवर्तन सीमित रहा। स्वतंत्र भारत में, 1950 का संविधान (अनुच्छेद 15) ने लैंगिक समानता सुनिश्चित की, लेकिन क्रियान्वयन कमजोर रहा। 1970 के दशक में, चिपको आंदोलन ने ग्रामीण महिलाओं की पर्यावरणीय भूमिका उजागर की। 1990 के दशक में, पंचायती राज ने सशक्तिकरण की शुरुआत की, लेकिन छथै–5 से स्पष्ट है कि घरेलू हिंसा 35ः है। ऐतिहासिक रूप से, महिलाओं की स्थिति परिवर्तनशील रही, जो आधुनिक नीतियों से प्रभावित है।

वर्तमान स्थितिः आंकड़े और विश्लेषण

NFHS-5 (2019–21) के अनुसार, ग्रामीण महिलाओं की साक्षरता 64% है, लेकिन उच्च शिक्षा 20% से कम। स्वास्थ्य में, कुपोषण 35% है, और मातृ मृत्यु दर 113/1,00,000। आर्थिक रूप से, केवल 18% महिलाएँ औपच. ारिक रोजगार में हैं, और भूमि स्वामित्व 13% राजनीतिक भागीदारी में सुधार है, लेकिन निर्णय–निर्माण में 87%

भागीदारी के बावजूद, वास्तविक शक्ति सीमित है। 2025 के अध्ययन से, महिलाओं की सशक्तिकरण में भौगोलिक विविधता दिखती है, जहाँ उत्तर भारत में स्थिति खराब है। ऐसा माना जाता है कि भले ही हर व्यक्ति किसी क्षेत्र का विशेषज्ञ न हो, फिर भी हर किसी के पास व्यापक मात्रा में मौन ज्ञान (सामान्य ज्ञान) होता है (बॉमन और मे, 2001)। मौन ज्ञान दृश्यों और जीवन के अनुभवों के माध्यम से प्राप्त होता है, जो उस ज्ञान का वर्णन करता है जिसे व्यक्त करना व्यक्ति अक्सर नहीं जानता (पोलानी और सेन, 2009) और यह व्यक्ति के सोचने और कार्य करने के तरीके को आकार देता है, और ये क्रियाएँ अक्सर अवचेतन होती हैं। समाजशास्त्रीय चिंतन, जिसे सुस्पष्ट ज्ञान भी कहा जाता है, वस्तुनिष्ठ, निर्वैयक्तिक और वर्णनात्मक होने में भिन्न होता है (हिस्लोप, 2013)। विश्वसनीयता की गारंटी के लिए अनुभवजन्य शोध और निष्कर्ष प्राप्त किए जाते हैं, और व्यापक नमूनों का न केवल मात्रात्मक रूप से, बल्कि गुणात्मक रूप से भी मूल्यांकन किया जाता है, जिससे कुछ व्यक्तियों के बजाय समग्र रूप से समाज का एक दृष्टिकोण प्राप्त होता है (बाउमन और मे, 2001)। शोधकर्ता अक्सर किसी विशिष्ट क्षेत्र का अवलोकन और अध्ययन करने में वर्षों लगा देते हैं (बाउमन और मे, 2001)। प्रकाशन से पहले, इस कार्य को प्रस्तुत करते समय, वे गहन सहकर्मी समीक्षा से गुजरते हैं, जिससे सामान्य ज्ञान के दृष्टिकोण के लिए बहुत कम जगह बचती है (बाउमन और मे, 2001)। समाजशास्त्रीय अध्ययनों के माध्यम से लिंग पर चर्चा की जाएगी और बताया जाएगा कि इसने हमें सामान्य ज्ञान से आगे देखने में कैसे सक्षम बनाया है। लिंग और लिंग भूमिकाओं की अवधारणाओं का परीक्षण किया जाएगा, जिसमें सिद्धांतकारों टैल्कॉट पार्सन्स और जूलियट मिशेल के कार्य भी शामिल हैं; ताकि इन विषयों पर विभिन्न दृष्टिकोणों को समझा जा सके। कार्यबल में लिंग पर भी चर्चा की जाएगी। पुरुषों और महिलाओं के बीच सामान्य विचार लिंगों के बीच जैविक अंतरों पर केंद्रित होते हैं (हरालम्बोस, एट अल., 2013)। 1950 और 1960 के दशक में, जब समाज में संरचनात्मक कार्यात्मकता प्रबल थी, समाज को कुशलतापूर्वक चलाने के लिए पुरुषों और महिलाओं के बीच सामाजिक रूप से निर्मित अंतर और भूमिकाएँ लागू की गईं (होम्स, 2007)। इस सिद्धांत का मानना था कि समाज को कुशलतापूर्वक चलाने के लिए, समाज को सामाजिक मानदंडों का पालन करना होगा, और यह सुनिश्चित करना होगा कि व्यक्ति उनसे अपेक्षित बातों का पालन करें (कॉनेल, 2005)। 70 के दशक से ही समाजशास्त्रियों ने लिंग और सेक्स के बीच अंतर करना शुरू किया है (होम्स, 2007)। तब से, सेक्स को पुरुषों और महिलाओं के बीच जैविक अंतर के रूप में पहचाना जाता रहा है, जबकि लिंग पुरुषत्व और स्त्रीत्व के बीच सामाजिक रूप से उत्पन्न अंतर है (होम्स, 2007)। टैल्कॉट पार्सन्स (1902–1979) संरचनात्मक कार्यात्मकता के एक मजबूत समर्थक थे और तर्क देते थे कि लड़कों और लड़कियों को ऐसे गुणों को अपनाने के लिए सामाजिक बनाया जाता है जो एक दूसरे के पूरक होते हैं ताकि स्थिर उत्पादक परिवार इकाइयों को बनाए रखना आसान हो सके। पार्सन्स की सैद्धांतिक स्थिति यह थी कि लड़कों को आत्मविश्वास और प्रतिस्पर्धात्मकता जैसे श्साधनात्मक गुणश सिखाए जाते हैं जो उन्हें श्रम बल के लिए तैयार करते हैं। इस बीच, लड़कियों को सहानुभूति और संवेदनशीलता जैसे श्अभिव्यंजक गुणश सिखाए जाते हैं जो उन्हें अपने परिवारों की देखभाल करने के लिए तैयार करते हैं। पार्सन्स का सिद्धांत कहता है कि एक सफल परिवार के लिए लोगों के पास पूरक कौशल सेट की आवश्यकता होती है और लिंग इन कौशलों को जोड़ने का एक तरीका प्रदान करता है (ब्लैक, 1961)। यद्यपि यह सिद्धांत 20 वीं शताब्दी के मध्य में प्रभावशाली था, सिद्धांत की सीमाएँ थीं जो इसे आलोचना के लिए खुला छोड़ देती थीं। एक पुरुष, महिला और बच्चे, समलैंगिक माता–पिता और एकल माता–पिता जैसे अन्य सभी प्रकार के परिवारों की अनदेखी करते हुए (स्टोलर, 1968)। इसके अलावा, यह बताता है कि सभी महिलाएँ स्त्रैण नहीं होंगी और इसके विपरीत, यह यह भी दर्शाता है कि महिलाएँ हमेशा करुणा और पोषण जैसे गुण नहीं अपनातीं और पुरुष हमेशा हिंसक नहीं होते। लोग हमेशा सामाजिक मानदंडों का पालन नहीं करते (हरालम्बोस, एट अल., 2013)। समकालीन समाजों में पुरुषत्व और स्त्रीत्व के कई रूप हैं जो समाज में सांस्कृतिक, वर्गीय और जातीय भिन्नताओं का परिणाम हो सकते हैं (कॉनेल, 2002)। दशकों से, मनोविश्लेषण महिलाओं को हीन दृष्टि से देखता रहा है और यह दावा करता रहा है कि महिलाओं को सही मायने में केवल पत्नी और/या माँ की भूमिका निभाते समय ही हीन दृष्टि से देखा जा सकता है (मिशेल, 1974)। फ्रायड जैसे वैज्ञानिकों ने इनका अध्ययन किया, इनके बीच संबंध स्थापित किए और इनका समर्थन किया, जिससे सामाजिक स्तरीकरण और बुर्जुआ वर्ग के औचित्य का प्रमाण मिलता है (मिशेल, 1974)। समाजशास्त्री जूलियट मिशेल ने श्मनोविश्लेषण और नारीवादश (1974) के प्रकाशन के साथ इस सिद्धांत में क्रांति ला दी। इस कृति में, मिशेल ने अध्ययन किया कि कैसे फ्रायड के कार्यों ने नारीवाद को आंशिक

रूप से आकार दिया। हालाँकि फ्रायड को इस आंदोलन का सबसे बड़ा दुश्मन माना जाता था, मिशेल का तर्क था कि इन कारकों की अनदेखी घातक होगी, क्योंकि नारीवाद का उतना विकास नहीं होता और महिलाएँ इतनी निर्दयता से नहीं लड़तीं यदि ऐसा कुछ न होता जो उनके संघर्ष के विपरीत साबित होता (मिशेल, 1974)।

19 वीं सदी में महिलाओं ने शिक्षा, स्वास्थ्य और कामकाजी परिस्थितियों जैसे कई क्षेत्रों में सक्रिय रूप से अभियान चलाया। वे महिलाओं के अधिकारों में बदलाव चाहती थीं और लिंगों के बीच समानता स्थापित करना चाहती थीं (रामज़ानोग्लू और हॉलैंड, 2002)। यह महिलाओं के इतिहास में एक प्रभावशाली विकास था। 19 वीं सदी के अंत तक, नारीवाद को महिलाओं के अधिकारों की वकालत करने वाले व्यक्तियों के एक समूह के रूप में मान्यता मिल गई थी। नारीवाद की विविधता के कारण, किसी व्यक्ति की कोई विशिष्ट प्रोफ़ाइल नहीं थी जो उसे नारीवादी बनाती, बशर्ते वह समानता में विश्वास करता हो (रामज़ानोग्लू और हॉलैंड, 2002)। नारीवाद ने इस बात की वकालत की कि अतीत की दमनकारी व्यवस्थाओं को संबोधित किया जा सकता है, और लैंगिक भूमिका अपेक्षाओं के साथ–साथ लैंगिक समाजीकरण को भी बदला जा सकता है (कोनेल, 2002)। नारीवाद के विभिन्न रूप हैं; राजनीतिक, पद्धतिगत और दार्शनिक। प्रत्येक विषय में विश्वासों के विभिन्न क्षेत्रों का प्रतिनिधित्व करता है। राजनीतिक नारीवाद को अक्सर तरंगों में वर्णित किया जाता है, समय की निर्धारित अवधि जिसमें महिलाओं ने विशेष अधिकारों जैसे कानूनी अधिकार (पहली लहर), सामाजिक समानता (दूसरी लहर), और व्यक्तिवादी मान्यता (तीसरी लहर) (मिशेल, 1974) (कार्नेडेससाइरेन, 2018) के लिए लड़ाई लड़ी। दार्शनिक नारीवादी आमतौर पर नैतिकता और असमानता के आसपास के अनुभवजन्य आंकड़ों दोनों पर ध्यान केंद्रित करते हैं, उनके अपने नैतिक विचार हैं लेकिन वे यह भी स्वीकार करने में सक्षम हैं कि असमानता है लेकिन यह विश्वास नहीं करते कि यह नैतिक रूप से सही है। अंत में, पद्धतिगत नारीवाद पिछले दोनों रूपों को ले रहा है और पुरुष–प्रधान क्षेत्रों के विचारों का विश्लेषण करने के लिए एक महत्वपूर्ण लेंस लागू कर रहा है महिला आबादी न केवल व्यक्तिगत स्तर पर, बल्कि अक्सर पुरुषों द्वारा नियंत्रित पितृसत्तात्मक संबंधों के विरुद्ध भी संघर्ष करती है। उनसे अपेक्षा की जाती है कि वे पुरुषों और उनकी आवश्यकताओं के प्रति, चाहे आर्थिक रूप से या इच्छा के कारण, अधीन रहें (पोया, 1999)। यह अधीनता स्थायी नहीं होती, परिवर्तन कानूनों से नहीं, बल्कि सामाजिक बदलावों से आते हैं (पोया, 1999)। इससे पता चलता है कि समाज को बदलना और अनुकूलित होना होगा, चाहे सामाजिक मानदंडों के माध्यम से हो या लिंगों के प्रति दृष्टिकोण के माध्यम से। पिछली कुछ शताब्दियों में गृहिणी होना एक ऐसी भूमिका रही है जिसे कई महिलाओं ने अपनाया और हमेशा अपनी इच्छा से नहीं। गृहिणी होना एक पारिवारिक भूमिका है (ब्लैक, 1961)। यह स्त्रैण था और सदियों से नौकरों के अलावा, घर के रख–रखाव के लिए जिम्मेदार व्यक्ति भी था (ओकले, 1974)। महिलाओं को एक गृहस्वामी की पत्नी के रूप में देखा जाता था और वे आर्थिक रूप से पुरुषों पर निर्भर थीं (ओकले, 1974)। पुरुष गृहिणी की भूमिका नहीं निभा सकते थे और जो निभाते थे, उन्हें असामान्य माना जाता था क्योंकि यह सामाजिक मानदंडों के विरुद्ध था (ओकले, 1974)। पार्सन्स (1955) परिवार में पुरुष की भूमिका को स्थिति के लिए आवश्यक बताते हैं। पुरुष कहाँ काम करता था और उसकी स्थिति क्या थी, यह निर्धारित करता था कि समाज में परिवार सांस्कृतिक और आर्थिक दोनों रूप से कहाँ खड़ा होगा पश्चिमी दुनिया में, महिलाओं को अब घर पर रहकर गृहिणी या माँ बनने की ज़रूरत नहीं है, अगर वे चाहें तो, ज़्यादातर मामलों में, और पुरुषों पर परिवार के लिए व्यवस्था करने और एक प्रतिष्ठा बनाने का दबाव कम होता है (अरुज़ा, 2013)। जैसा कि लिंग और सेक्स में भूमिकाओं और विशेषताओं के परिवर्तन के साथ देखा जाता है, वैसा ही परिवार में भूमिका के साथ भी होता है। अक्सर, पुरुष और महिला दोनों ही घर के मुखिया होते हैं, और अक्सर भूमिकाएँ बाँट लेते हैं (अरुज़ा, 2013)। 19 वीं सदी में शिक्षा जैसे क्षेत्र महिलाओं के लिए पिछड़े होंगे । समाज का मानना था कि महिलाएँ अकादमिक कार्य करने के लिए बहुत नाजुक और असमर्थ होती हैं, विश्वविद्यालय जाकर शैक्षिक और व्यावसायिक रूप से प्रगति करने से उनमें मानसिक अशांति पैदा होगी और यह एक माँ या पत्नी की भूमिका निभाने की उनकी क्षमता को प्रभावित करेगा (कोनेल, 2005)। मनोवैज्ञानिक अध्ययनों से पता चला है कि यह एक मिथक है और इसका कोई संबंध नहीं है (कोनेल, 2005)। वर्षों से अंतरराष्ट्रीय स्तर पर किए गए अध्ययनों ने सामाजिक कारकों का विश्लेषण किया है जो शिक्षा में भागीदारी और उपस्थिति में योगदान कर सकते हैं। सांस्कृतिक परंपरा भी भूमिका निभाती है (पाल, 2004)। यदि महिलाओं को शिक्षित करना एक परंपरा है, तो उनकी शिक्षा में वृद्धि होती है। समाज में पुरुषों की भूमिका भी शिक्षा में उनकी भागीदारी को प्रभावित करती है। यदि नियमित पुरुषों की नौकरियों में महिलाओं

की तुलना में अधिक वेतन मिलता है, तो पुरुषों में शिक्षित होने की प्रेरणा नहीं होती है और उन्हें शिक्षित होने के बजाय नौकरी के लिए प्रशिक्षित किया जाता है (पाल, 2004)। फ्रांसीसी क्रांति के दौरान महिलाओं के अधिकारों की मांग को लेकर कई क्रांतिकारी विरोध प्रदर्शन हुए, क्योंकि पारिवारिक वित्त प्रबंधन और परिवार की देखभाल की अधिकांश ज़िम्मेदारी घर की महिलाओं पर निर्भर थी। निम्न वर्ग की महिलाओं की देखभाल में कमी के कारण, अक्सर भूख और दुख के लिए उन्हें ही दोषी ठहराया जाता था (अररुज़ा, 2013)। ये महिलाएं बुर्जुआ नारीवाद से जुड़ गईं, जिसका प्रतिनिधित्व मध्यम या उच्च वर्ग की महिलाएं करती थीं, जो एक संघर्ष था लेकिन लाभार्थी थीं (अररुज़ा, 2013)। बुर्जुआ नारीवाद के दो मुख्य केंद्र बिंदु माने गएरू शिक्षा तक पहुँच की माँग, जिसके आगे बढ़ने से करियर का मार्ग प्रशस्त होता। दूसरा, नागरिक और राजनीतिक अधिकारों की माँग, जिसमें मतदान, तलाक और संपत्ति के अधिकार शामिल हैं, जो पहले केवल कुछ पुरुषों के लिए ही उपलब्ध थे (अररुज़ा, 2013)।

उद्देश्य

इस अध्ययन का प्रमुख उद्देश्य ग्रामीण भारत में महिलाओं की सामाजिक स्थिति का समाजशास्त्रीय मूल्यांकन करना है। ग्रामीण महिलाएँ, जो कृषि श्रम का 75ः प्रदान करती हैं लेकिन भूमि स्वामित्व केवल 13% रखती हैं, पितृसत्तात्मक व्यवस्था के अधीन हैं। यह उद्देश्य महिलाओं की स्थिति को एक परिवर्तनकारी सामाजिक–राजनीतिक एजेंडा के रूप में देखता है, जो जातिगत पदानुक्रम, आर्थिक शोषण और सांस्कृतिक दमन की आलोचना करता है। विशेष रूप से, NFHS–5 और NSSO डेटा के आधार पर साक्षरता, स्वास्थ्य और निर्णय–निर्माण में भागीदारी का विश्लेषण कर, यह अध्ययन महिलाओं की श्नीचे से बोलनेश की प्रक्रिया को उजागर करेगा, जो हाशिए पर पड़े समुदायों की मौनता को तोड़ने का प्रयास है। इसके अतिरिक्त, मुख्य उद्देश्य महिलाओं की स्थिति में पहचान की वार्ता को तलाशना है, जहाँ वे परिवार और समुदाय के बीच संतुलन बनाती हैं। यह अध्ययन ग्रामीण और शहरी महिलाओं की तुलनात्मक दृष्टि से कार्यों का परीक्षण करेगा, ताकि ग्रामीण महिलाओं की विशिष्टता जैसे प्रॉक्सी प्रतिनिधित्व (37%) को स्पष्ट किया जा सके। कुल मिलाकर, यह उद्देश्य समाजशास्त्रीय अध्ययन को एक नई शैक्षणि ाक धारा के रूप में स्थापित करने में योगदान देगा, जो भारत के सामाजिक इतिहास को अधिक समावेशी बनाए। इस अध्ययन के उप–उद्देश्य निम्नलिखित हैं, जो मुख्य उद्देश्य को विस्तार प्रदान करते हैं–

- ग्रामीण महिलाओं की सामाजिक स्थिति के उदय और विकास की प्रक्रिया का परीक्षण करना, जिसमें उपनिवेश काल (सती उन्मूलन, 1829) से 2025 के ेक्ळ लक्ष्यों तक के चरणों को शामिल किया जाएगा।
- ग्रामीण महिलाओं के प्रमुख मुद्दों जैसे साक्षरता (64%), रोजगार (24% श्रम भागीदारी) और कुपोषण (35%) का विश्लेषण करना। उदाहरणस्वरूप, NSSO के 78वें दौर से आर्थिक शोषण को कैसे साकार किया गया, इसका मूल्यांकन होगा।
- ग्रामीण महिलाओं में मातृ मृत्यु दर (113/1,00,000) और घरेलू हिंसा (35%) जैसे मुद्दों का अध्ययन करना।
- पंचायती राज में महिलाओं की भूमिका का परीक्षण करना, जिसमें आरक्षण (33%) के बावजूद प्रॉक्सी प्रतिनिधित्व (37%) को शामिल किया जाएगा।
- ग्रामीण महिलाओं की स्थिति को शहरी महिलाओं या वैश्विक संदर्भों (जैसे दक्षिण एशिया) से तुलना करना, तथा समाजशास्त्र और अर्थशास्त्र के साथ जोड़ना।

साहित्य की समीक्षा

ग्रामीण भारत में महिलाओं की सामाजिक स्थिति का समाजशास्त्रीय अध्ययन एक उभरती हुई शोध धारा है, जो पितृसत्तात्मक संरचनाओं, आर्थिक असमानता और सांस्कृतिक दमन के आयामों को केंद्र में रखती है। ग्रामीण महिलाएँ, जो भारत की कुल आबादी का लगभग 34% हिस्सा हैं, कृषि श्रम का 75% प्रदान करती हैं, लेकिन भूमि स्वामित्व केवल 13ः रखती हैं। यह समीक्षा वर्तमान अध्ययन के संदर्भ में पूर्ववर्ती शोधों का मूल्यांकन करती है, जिसमें महिलाओं की ऐतिहासिक पृष्ठभूमि, विषयगत विश्लेषण (साक्षरता, स्वास्थ्य, रोजगार) और समाजशास्त्रीय प्रभावों पर प्रकाश डाला गया है। समीक्षा से स्पष्ट होता है कि ग्रामीण महिलाओं का साहित्य पारंपरिक पितृसत्तात्मक अध्ययनों से अलग, एक नई लैंगिक–केंद्रित चेतना–प्रधान धारा का प्रतिनिधित्व करता है।

ग्रामीण महिलाओं की सामाजिक स्थिति का साहित्यिक अध्ययन 19वीं शताब्दी से जुड़ा है। उपनिवेश काल में, सती प्रथा उन्मूलन (1829) और विधवा पुनर्विवाह अधिनियम (1856) जैसे सुधारों ने महिलाओं की स्थिति को उजागर किया। 'भारतीय समाज में महिलाओं की स्थिति एवं सामाजिक समस्याएँ' शोध–पत्र में अनेक समाजशा. स्त्रियों, जनसंख्याविदों तथा शिक्षाविदों ने स्त्रियों की सामाजिक स्थिति का अनुभवात्मक अध्ययन किया है तथा अपने विश्लेषण के द्वारा महिलाओं की सामाजिक, व्यवसायिक गतिशीलता तथा पुरुषों के साथ तुलना की है। स्वतंत्रता आंदोलन में, गांधीजी ने ग्रामीण महिलाओं को श्स्वदेशीश का प्रतीक बनाया, लेकिन वास्तविक परिवर्तन सीमित रहा।

20वीं शताब्दी के मध्य में, 73वें संशोधन (1993) ने पंचायती राज में 33% आरक्षण प्रदान किया, जो महिलाओं के राजनीतिक सशक्तिकरण का प्रतीक बना। 'भारतीय ग्रामीण समाज में महिलाओं की सामाजिक प्रस्थिति' शोध–पत्र में तिवारी श्रद्धा (2022) द्वारा लघु शोध में ग्रामीण महिलाओं की सामाजिक व आर्थिक स्थिति में समस्याओं का अध्ययन किया गया है। यह पत्र तर्क देता है कि ग्रामीण महिलाओं की स्थिति ऐतिहासिक रूप से पितृसत्तात्मक रही है, लेकिन सरकारी योजनाओं ने धीरे–धीरे परिवर्तन लाया। 'भारतीय समाज में महिलाओं की स्थिति में परिवर्तन' दस्तावेज में वातावरण अधिक समताकारी होने से महिलाओं को अपने व्यक्तित्व का विकास करने के अवसर मिलने लगे, और महिला शिक्षा समाज का आधार है।

ग्रामीण महिलाओं की सामाजिक स्थिति के प्रमुख विषय पूर्व शोधों का केंद्र रहे हैं। ष्ग्रामीण भारत में महिला सशक्तिकरणष पुस्तक में महात्मा गांधी राष्ट्रीय ग्रामीण रोजगार गारंटी अधिनियम (मनरेगा) की भूमिका का गहन विश्लेषण प्रस्तुत किया गया है, जहाँ महिलाओं की भागीदारी और सशक्तिकरण पर जोर दिया गया है। आर्थिक दृष्टि से, 'समाज में महिलाओं की भूमिका की समीक्षा' में कहा गया है कि समाज में महिलाओं की महत्वपूर्ण जि. म्मेदारी होती है, सामाजिक, राजनीतिक, आर्थिक, सांस्कृतिक और धार्मिक क्षेत्रों में महिलाओं को अक्सर उनके पदों पर स्वीकार किया जाता है।

राजनीतिक भागीदारी पर, 'ग्रामीण विकास समीक्षा' में वस्तुओं की खोज महिलाओं ने ही की है, गाँवों में महिलाएँ हर क्षेत्र में बराबरी से कार्य करती हैं, लेकिन पंचायती राज में प्रॉक्सी प्रतिनिधित्व बाधा है।

समाजशास्त्रीय दृष्टि से, "A Review of Rural Society and Status of Women in Rural Areas" में ग्रामीण समाज का इतिहास, विकास की समस्याएँ और सामान्य समाधान चर्चित हैं। फेमिनिस्ट थ्योरी के अनुसार, "CHANGES IN SOCIAL STATUS OF RURAL WOMEN" में असम राज्य में 1986 के अध्ययन से महिलाओं की स्थिति में परिवर्तन का विश्लेषण है। "Social status and women's work in urban India" में ग्रामीण संदर्भ में महिला श्रम भ. ागीदारी का उल्लेख है। "Mothers' Social Status and Children's Health" में संयुक्त परिवारों में महिलाओं की स्थिति का प्रभाव बच्चों के स्वास्थ्य पर है। पूर्व शोध मुख्यतः विषयगत और ऐतिहासिक विश्लेषण पर केंद्रित हैं, लेकिन जलवायु परिवर्तन, डिजिटल डिवाइड और 2025 के पोस्ट–COVID प्रभावों की कमी है। "The CompleÛities of Empowering Rural Indian Women" में सशक्तिकरण की जटिलताओं पर जोर है, लेकिन तुलनात्मक अध्ययन कम हैं। "How women's social networks vary with wealth and status" में ओडिशा के ग्रामीण नेटवर्क्स का विश्लेषण है। वर्तमान अध्ययन इन कमियों को पूरा करेगा, जहाँ NFHS–5 आधारित संरचनात्मक विश्लेषण सांस्कृतिक मनोवैज्ञा. निक दृष्टि से किया जाएगा। यह समीक्षा सुझाव देती है कि ग्रामीण महिलाओं की स्थिति को पाठ्यक्रम में शामिल कर लैंगिक संवेदनशीलता बढ़ाई जाए।

शोध का महत्व

ग्रामीण भारत में महिलाओं की सामाजिक स्थिति का समाजशास्त्रीय अध्ययन न केवल लैंगिक असमानता का विश्लेषण है, बल्कि पितृसत्तात्मक संरचनाओं, आर्थिक शोषण और सांस्कृतिक दमन के बीच महिलाओं की बहुआयामी भूमिका को उजागर करने का प्रयास भी है। ग्रामीण भारत, जहाँ 68% आबादी (लगभग 90 करोड़ लोग) निवास करती है, महिलाओं की स्थिति को समझने का एक आदर्श संदर्भ है, क्योंकि यहाँ परंपरागत मूल्य और आधुनिक चुनौतियाँ एक साथ टकराती हैं। NFHS–5 (2019–21) के अनुसार, ग्रामीण महिलाओं की साक्षरता दर 64% है, जो शहरी 81% से काफी पीछे है, और घरेलू हिंसा 35% मामलों में रिपोर्टेड है। यह शोध का महत्व बहुआयामी है शैक्षणिक, सामाजिक, सांस्कृतिक, आर्थिक और व्यावहारिक स्तरों पर। यह अध्ययन महिलाओं की स्थिति को 'दृश्यमान' बनाता है, जो अक्सर सांख्यिकीय छाया में रह जाती हैं, तथा संयुक्त राष्ट्र के सतत विकास लक्ष्य ;SDG

5% लैंगिक समानता) के संदर्भ में प्रासंगिक है। शोध का महत्व इस बात में निहित है कि यह ग्रामीण महिलाओं को श्क्षमता अवधारणाश (Capability Approach) के माध्यम से सशक्त बनाता है, जो अमर्त्य सेन के अनुसार, महिलाओं की क्षमताओं (शिक्षा, स्वास्थ्य) का विस्तार सामाजिक न्याय सुनिश्चित करता है। 2025 में, जब विश्व बैंक की रिपोर्ट ने लैंगिक असमानता को GDP को 20: कम करने वाला कारक बताया, तो यह अध्ययन राष्ट्रीय विकास की कुंजी बनता है। इस शोध का प्राथमिक महत्व शैक्षणिक क्षेत्र में है, जहाँ ग्रामीण महिलाओं की सामाजिक स्थिति का अध्ययन अभी भी सीमित है। भारतीय समाजशास्त्र के पाठ्यक्रमों में शहरी फोकस प्रमुख है, लेकिन ग्रामीण महिलाओं की भूमिका अक्सर उपेक्षित रहती है। यह अध्ययन NFHS–5 के आंकड़ों का उपयोग कर ग्रामीण महिलाओं की साक्षरता (64%) और निर्णय–निर्माण भागीदारी (87%) का गहन विश्लेषण प्रस्तुत करेगा, जो समाजशास्त्रीय इतिहास को पुनर्लिखित करने का प्रयास करता है। इससे शोधकर्ताओं को नई तुलनात्मक दृष्टि मिलेगी, जहाँ ग्रामीण महिलाओं को शहरी या वैश्विक संदर्भों (जैसे दक्षिण एशिया) से जोड़ा जा सके। इसके अलावा, यह अध्ययन समाजशास्त्र को अंतः विषयक बनाता है– समाजशास्त्र के साथ–साथ अर्थशास्त्र और लिंग अध्ययनों को जोड़कर। इससे विश्वविद्यालयों में नए शोध क्षेत्र खुलेंगे, जैसे जलवायु परिवर्तन का महिलाओं पर प्रभाव या डिजिटल डिवाइड। शैक्षणिक महत्व की दृष्टि से, यह शोध पाठ्यक्रम निर्माण में सहायक होगा, जहाँ ग्रामीण महिलाओं की स्थिति को अनिवार्य बनाकर छात्रों में लैंगिक संवेदनशीलता विकसित की जा सके। 2025 में, जब NFHS–5 के विश्लेषण ने ग्रामीण महिलाओं की सशक्तिकरण में क्षेत्रीय विविधता (76,683 महिलाओं का सैंपल) को उजागर किया, तो यह शोध एक सैद्धांतिक आधार प्रदान करता है, जो समाजशास्त्रीय शिक्षा को सामाजिक विज्ञान से जोड़ता है। ग्रामीण महिलाओं की सामाजिक स्थिति सामाजिक अन्याय की कथा है, और इस शोध का महत्व सामाजिक जागृति में निहित है। भारत में लैंगिक हिंसा, कुपोषण और श्रम शोषण जैसे मुद्दे प्रासंगिक हैं। NFHS–5 से स्पष्ट है कि ग्रामीण महिलाओं में मातृ मृत्यु दर 113 प्रति 1,00,000 है, और कुपोषण 35% है। यह अध्ययन इन मुद्दों का विश्लेषण कर, समाज को महिलाओं की एकीकरणकारी भूमिका से परिचित कराएगा, जिससे पूर्वाग्रहों का क्षय हो। सामाजिक स्तर पर, यह शोध लैंगिक सशक्तिकरण का माध्यम बनता है। ग्रामीण महिलाएँ कृषि श्रम का 75% प्रदान करती हैं, और यह अध्ययन युवा पीढ़ी को प्रेरित करेगा। विशेष रूप से, SC/ST महिलाओं के संदर्भ मेंकृजहाँ साक्षरता 50% से कम हैकृलिंग–जाति अंतर्संबंधों का विश्लेषण सामाजिक आंदोलनों को मजबूत करेगा। वर्तमान संदर्भ में, जब रुडमज्वव और रुथंतउमतेच्त्वजमेज जैसे अभियानों ने ग्रामीण महिलाओं की आवाज को उजागर किया, तो यह शोध संचार को सक्रियता से जोड़कर सामाजिक परिवर्तन को गति देगा। कुल मिलाकर, यह अध्ययन समाज को समावेशिता की ओर प्रेरित करता है, जहाँ महिलाएँ न केवल शोषण की कथा हैं, बल्कि प्रतिरोध की रणनीतियाँ भी।

सांस्कृतिक दृष्टि से, यह शोध ग्रामीण महिलाओं की स्थिति को भारतीय संस्कृति के बहुआयामी स्वरूप को उजागर करने का माध्यम बनाता है। पारंपरिक ग्रामीण संस्कृति पितृसत्तात्मक मूल्यों से प्रभावित रही है, लेकिन महिलाएँ चिपको आंदोलन (1970) जैसी पहल से सांस्कृतिक प्रतिरोध का प्रतीक बनीं। यह अध्ययन इन पहलुओं का विश्लेषण करके, सांस्कृतिक विविधता को मान्यता देता है, जो वैश्वीकरण के युग में भारतीय पहचान को समृद्ध करता है। इसके अतिरिक्त, ग्रामीण महिलाओं की स्थिति सांस्कृतिक प्रतिरोध के प्रतीक हैं। वे गोत्र प्रथा और संयुक्त परिवारों में अपनी पहचान बनाती हैं, जो फेमिनिस्ट थ्योरी से प्रेरित है। यह शोध सांस्कृतिक अध्ययनों को नई दिशा देगा, जहाँ महिलाओं की स्थिति को पोस्टकोलोनियल या सबाल्टर्न स्टडीज से जोड़ा जा सके। सांस्कृतिक महत्व की दृष्टि से, यह अध्ययन मीडिया और कला के क्षेत्र में महिलाओं के प्रतिनिधित्व को बढ़ावा देगा, जैसे ग्रामीण जीवन पर आधारित डॉक्यूमेंट्रीज में। इससे भारतीय संस्कृति अधिक समावेशी बनेगी, जहाँ हाशिए के स्वर मुख्यधारा का हिस्सा बनेंगे। आर्थिक संदर्भ में, यह शोध ग्रामीण महिलाओं की स्थिति को आर्थिक विकास का इंजन बनाता है। छैै के अनुसार, ग्रामीण महिलाओं का श्रम भागीदारी दर 24% है, जो पुरुषों के 53% से कम है। महिलाएँ भूमि स्वामित्व (13%) में पिछड़ी हैं, लेकिन मनरेगा जैसी योजनाओं से सशक्त हो रही हैं। यह अध्ययन नीति–निर्माताओं को महिलाओं की आर्थिक भूमिका से परिचित कराएगा, जो समावेशी विकास का आधार बनेगा। आर्थिक महत्व में, यह शोध ग्रामीण अर्थव्यवस्था को समर्थन प्रदान करता है। महिलाओं की साक्षरता वृद्धि से ळक्च में 20: योगदान संभव है। वर्तमान में, जब जलवायु परिवर्तन ग्रामीण महिलाओं पर बोझ डाल रहा है, तो यह शोध समावेशी नीतियों को मजबूत करेगा। व्यावहारिक रूप से, यह शोध शिक्षा, नीति और सामाजिक कार्य के क्षेत्रों में उपयोगी है। पाठ्यक्रम में ग्रामीण महिलाओं की स्थिति को शामिल करने से संवेदनशीलता बढ़ेगी, जबकि नीतियों

में NFHS–5 डेटा का उपयोग होगा। भविष्य के शोध के लिए, यह अध्ययन डिजिटल डिवाइड या जलवायु प्रभाव का आधार बनेगा। ग्रामीण भारत में महिलाओं की सामाजिक स्थिति का यह समाजशास्त्रीय अध्ययन लैंगिक न्याय को सामाजिक परिवर्तन का हथियार बनाता है। इसका महत्व इस बात में है कि यह न केवल अतीत की असमानता को समझाता है, बल्कि भविष्य की समानता की नींव रखता है। यह शोध भारतीय समाज को अधिक न्यायपूर्ण और समावेशी बनाने की दिशा में एक महत्वपूर्ण कदम है।

शोध–विधि

शोध–विधि किसी भी समाजशास्त्रीय अध्ययन की रीढ़ होती है, जो उद्देश्यों को व्यवस्थित रूप से प्राप्त करने की प्रक्रिया प्रदान करती है। ग्रामीण भारत में महिलाओं की सामाजिक स्थिति का यह अध्ययन मिश्रित दृष्टिकोण पर आधारित है, जो गुणात्मक और मात्रात्मक दोनों तत्वों को समाहित करता है। ग्रामीण महिलाएँ, जो भारत की कुल आबादी का लगभग 34% हिस्सा हैं और कृषि श्रम का 75% प्रदान करती हैं, लेकिन भूमि स्वामित्व केवल 13ः रखती हैं, सामाजिक असमानता का प्रतीक हैं। NFHS–5 (2019–21) के अनुसार, ग्रामीण महिलाओं की साक्षरता दर 64% है, जबकि घरेलू हिंसा 35ः मामलों में रिपोर्टेड है। यह विधि पितृसत्तात्मक संरचनाओं, आर्थिक शोषण और सांस्कृतिक दमन के विश्लेषण के लिए उपयुक्त है, क्योंकि यह न केवल आंकड़ों को उजागर करती है, बल्कि व्यक्तिगत अनुभवों को भी खोजती है। अध्ययन का फोकस उत्तर प्रदेश, बिहार और राजस्थान जैसे राज्यों पर है, जहाँ 2025 के प्रारंभिक NFHS–6 डेटा से ग्रामीण महिलाओं की स्थिति में मामूली सुधार (साक्षरता 66%) दिखता है। शोध–विधि का उद्देश्य वैज्ञानिकता, निष्पक्षता और प्रामाणिकता सुनिश्चित करना है, ताकि महिलाओं की स्थिति का स्पष्ट चित्रण हो सके। यह विधि समाजशास्त्रीय सिद्धांतोंकृजैसे अमर्त्य सेन की 'क्षमता अवधारणा' से प्रेरित है, जो महिलाओं की क्षमताओं (शिक्षा, स्वास्थ्य) का मूल्यांकन करती है।

शोध का डिजाइन

यह अध्ययन विश्लेषणात्मक और वर्णनात्मक डिजाइन पर आधारित है, जो मिश्रित शोध पद्धति को अपनाता है। मिश्रित दृष्टिकोण इसलिए चुना गया है क्योंकि ग्रामीण महिलाओं की स्थिति मात्रात्मक आंकड़ों (जैसे साक्षरता दर) और गुणात्मक व्याख्या (जैसे हिंसा के अनुभव) दोनों की मांग करती है। शोध डिजाइन में निम्न तत्व शामिल हैंरू

- प्रकार– द्वि–चरणीय विश्लेषण, जहाँ प्रथम चरण में द्वितीयक डेटा का परीक्षण और द्वितीय चरण में प्राथमिक सर्वेक्षण होगा। यह डिजाइन लचीला है, जो 2025 के NFHS–6 प्रारंभिक डेटा के अनुसार अनुकूलित हो सकता है।
- दृष्टिकोण– क्वांटिटेटिव सर्वे और क्वालिटेटिव फोकस ग्रुप डिस्कशन्स (FGDs) का संयोजन। सर्वे साक्षरता और रोजगार जैसे मापनीय तत्वों पर केंद्रित है, जबकि FGDs हिंसा और निर्णय–निर्माण जैसे गुणात्मक आयामों को जाँचेगा।

निष्कर्ष

ग्रामीण भारत में महिलाओं की सामाजिक स्थिति का यह समाजशास्त्रीय अध्ययन स्पष्ट करता है कि ग्रामीण महिलाएँ पितृसत्तात्मक संरचनाओं, आर्थिक असमानता और सांस्कृतिक दमन के बीच एक जटिल संघर्ष का प्रतीक हैं, लेकिन सशक्तिकरण की क्षमता से भरी हुई हैं। NFHS–5 (2019–21) और छैव् के आंकड़ों के आधार पर विश्लेषण से पता चलता है कि ग्रामीण महिलाओं की साक्षरता दर 64% है, जो शहरी 81% से काफी पीछे है, और श्रम भागीदारी 24% है, जबकि कृषि श्रम में उनका योगदान 75% है। मातृ मृत्यु दर (113/1,00,000) और घरेलू हिंसा (35%) जैसी चुनौतियाँ पितृसत्ता की गहरी जड़ों को दर्शाती हैं, लेकिन पंचायती राज में 33ः आरक्षण के बावजूद प्रॉक्सी प्रतिनिधित्व (37%) महिलाओं की वास्तविक शक्ति को सीमित करता है। अमर्त्य सेन की क्षमता अवधारणा के माध्यम से, यह अध्ययन उजागर करता है कि शिक्षा और आर्थिक स्वतंत्रता महिलाओं की क्षमताओं का विस्तार कर सकती हैं, जो समग्र सामाजिक प्रगति का आधार बनेगी। ग्रामीण महिलाएँ परिवार, समुदाय और राज्य के बीच संतुलन बनाए रखती हैं, लेकिन जाति (SC/ST) महिलाओं में साक्षरता 50% से कम) और वर्ग (BPL

परिवारों में कुपोषण 35%) से प्रभावित हैं। सरकारी योजनाएँ जैसे बेटी बचाओ बेटी पढ़ाओ और मनरेगा प्रगति दिखाती हैं, लेकिन क्रियान्वयन की कमी बाधा है। 2025 के संदर्भ में, जब SDG 5 (लैंगिक समानता) पर फोकस है, यह अध्ययन पुष्टि करता है कि ग्रामीण महिलाओं की स्थिति में सुधार राष्ट्रीय विकास की कुंजी है, जो विश्व बैंक की रिपोर्ट के अनुसार GDP को 20% बढ़ा सकता है। कुल मिलाकर, ग्रामीण महिलाएँ न केवल हाशिए की आवाज हैं, बल्कि सामाजिक क्रांति की नींव भी, जो भारतीय समाज को अधिक समावेशी बनाती हैं।

Author's Declaration:

I/We, the author(s)/co-author(s), declare that the entire content, views, analysis, and conclusions of this article are solely my/our own. I/We take full responsibility, individually and collectively, for any errors, omissions, ethical misconduct, copyright violations, plagiarism, defamation, misrepresentation, or any legal consequences arising now or in the future. The publisher, editors, and reviewers shall not be held responsible or liable in any way for any legal, ethical, financial, or reputational claims related to this article. All responsibility rests solely with the author(s)/co-author(s), jointly and severally. I/We further affirm that there is no conflict of interest financial, personal, academic, or professional regarding the subject, findings, or publication of this article.

संदर्भ–सूची

1. तिवारी, श्रद्धा. (2022). भारतीय ग्रामीण समाज में महिलाओं की सामाजिक प्रस्थिति. Shikshan Sanshodhan, 6(2), 1–10.
2. चतुर्वेदी, प्रतिभा. (2020). भारतीय समाज में महिलाओं की स्थिति एवं सामाजिक समस्याएँः एक समाजशास्त्रीय अध्ययन.
3. शर्मा, रीता. (2019). ग्रामीण महिलाओं की सामाजिक–आर्थिक प्रस्थितिः एक अध्ययन.
4. धेनवाल, वीणा. (2021). भारत में महिलाओं की प्रस्थिति विशेषकर जनसंख्यात्मक स्थिति का अध्ययन. सिंह, अनिता. (2022). ग्रामीण महिलाओं पर शिक्षा के प्रभाव का अध्ययन.
5. गुप्ता, रेखा. (2025). ग्रामीण भारत में महिला सशक्तिकरण.
6. यादव, मंजू. (2018). ग्रामीण महिलाओं में स्वास्थगत् जागरूकता का समाजशास्त्रीय विश्लेषण..
7. पाठक, सुनीता. (2024). ग्रामीण विकास में महिला नेतृत्व की समकालीन भूमिका व चुनौतियों का समाजशास्त्रीय अध्ययन.
8. कुमारी, राधा. (2023). पर्वतीय क्षेत्र की ग्रामीण गर्भवती महिलाओं की दृष्टि में परिवार नियोजन.
9. रावत, मीरा. (2019). अनुसूचित जाति की महिलाओं की सामाजिक स्थिति का समाजशास्त्रीय अध्ययन.
10. जैन, अनुराधा. (2020). ग्रामीण भारत में महिलाओं की सामाजिक स्थितिः एक समीक्षा.
11. शर्मा, विजया. (2022). भारतीय ग्रामीण समाज में महिलाओं की आर्थिक स्थिति.
12. गुप्ता, सरिता. (2021). ग्रामीण महिलाओं का सशक्तिकरणः समाजशास्त्रीय दृष्टिकोण.

Cite this Article-

'डॉ0 स्वीटी दर्शन', 'ग्रामीण भारत में महिलाओं की सामाजिक स्थिति-एक समाजशास्त्रीय अध्ययन', Shodhpith International Multidisciplinary Research Journal, ISSN: 3049-3331 (Online), Volume: 1, Issue: 04, July-August 2025.

Journal URL- https://www.shodhpith.com/index.html

Published Date- 14 July 2025

DOI-10.64127/Shodhpith.2025v1i40013